ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(2): 734-736
www.allresearchjournal.com
Received: 03-12-2015
Accepted: 06-01-2016

चित्रा मिलिंद गोस्वामी
हिन्दी विभाग गोगटे-जोगळेकर महाविद्यालय, रत्नागिरी, महाराष्ट्र।
मुंबई विश्वविद्यालय।

Correspondence
चित्रा मिलिंद गोस्वामी
हिन्दी विभाग गोगटे-जोगळेकर महाविद्यालय, रत्नागिरी, महाराष्ट्र।
मुंबई विश्वविद्यालय।

भूमंडलीकरण के दौर में गीतिनाटक अन्धा युग

चित्रा मिलिंद गोस्वामी

प्रस्तावना

वास्तविक कलाकृति वही है जिसका शाश्वत मूल्य हो। समय चाहे कितनी ही चाल बदले, कितनी ही मंजिल पार कर ले फिर भी वास्तविक साहित्यिक कृति की महत्ता न्यून नहीं होती। कवि क्रान्तिदर्शी होता है; अतीत और अनागत का ज्ञाता होता है - अत: वह जो कुछ लिखता है उसका सभी युगों में महत्व होता है। उसकी यही स्थावर महत्ता उसे राजनीति या प्रचारात्मक साहित्य से विशिष्ट स्थान दिलाती है। सदियों पुरानी वास्तविक कलाकृति आज भी हमें कुछ-न-कुछ देती है और कोरी प्रचार-भावना से मंडित कृति कल अपना अस्तित्व धारण करेगी या नहीं-यह भी कहना शंकास्पद है।

अन्धा युग सन् १९५४ में रचा गया। आज की दुनिया में १८ वर्ष बहुत बड़ी कालावधि है फिर भी इसे पढ़ने से आज विद्यमान समस्याओं की ओर संकेत मिलते हैं। साहित्य-सर्जन की समस्या, युद्धों की समस्या, शासन संचालन की समस्या, तटस्थता की समस्या, भाई-भतीजावाद की समस्या तथा जनता की दास-वृत्ति की समस्या कुछ ऐसी समस्याएँ हैं जिनकी ओर अन्धायुग हमारा ध्यान आकृष्ट करता है।

पश्चिम में द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त जो साहित्य आया वह संशयग्रस्त, चिन्ताग्रस्त तथा मानव की अन्तरात्मा को ध्वंस करनेवाला ही सिद्ध हुआ उसके प्रेरणास्त्रोत नीत्शे, मार्क्स, डिकेडैन्ट, मैक्स पिकार्ड आदि चिन्तकों ने यद्यपि तथाकथित नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत किये थे, वे मानव-मूल्य की अवहेलना करने से न चूके। उन्होंने सत्य और मर्यादा की परवाह नहीं की। मनुष्य को बर्बर और पशु स्वीकार करने में किसी विचिकित्सा का अनुभव नहीं किया। दिग्भ्रम और सन्देह को मनुष्य का आश्रय स्थान समझा। इस प्रकार मानव की अन्तरात्मा को अँधेरे में भटकने के लिए मजबूर कर दिया। ऐसे समय में साहित्य स्रष्टा के सम्मुख मानवीय गौरव और मानव-मूल्य मर्यादा को स्थापित करने की एक ज्वलन्त समस्या उपस्थित होती है। पश्चिम में मानव-मूल्य के सूर्य का उदय नहीं हो सका, पूर्व को यह कार्य संपन्न करता है। यह नई मर्यादा है जो विवेकयुक्त मानव की अन्तरात्मा की प्रतिष्ठा कर साहित्य को चिरन्तन महत्वशाली सिद्ध करना चाहती है।

अन्धा युग में चित्रित मानवमूल्य -

अन्धायुग में प्रभु को मानवीय मूल्यों के प्रतीक-रुप में प्रस्तुत करके यही समस्या समाधित की गई है कि यदि साहित्य में मानव-मूल्य की प्रतिष्ठापना की जाएगी तो मानव-भविष्य सुखी रहेगा। ऐसे साहित्य से कोई लाभ नहीं जो अन्तरात्मा की बर्बरता को उत्तेजित संसार में नरसंहार को प्रोत्साहन दे। प्रभु के शब्दों में मानव-मूल्य ही बोल रहा है -

''मेरा दायित्व वह स्थित रहेगा
हर मानव मन के उस वृत्त में.....
जिसके सहारे वह
सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए
नूतन निर्माण करेगा पिछले ध्वंसों पर
मर्यादा युक्त आचरण में
निर्भयता के
साहस के
ममता के
रस के
क्षण में
जीवित और सक्रिय हो उठूँगा मैं बार-बार।''

यह मानव-मूल्य वर्तमान काल के साहित्यकार को ही प्रतिष्ठित करता है। यदि वर्तमान के इस क्षण में प्रसाद और तन्द्रा का अवलम्बन किया गया तो भविष्य सुखद नहीं हो सकता।

आधुनिक विश्व में सावन-भादों की उमड़ती-घुमड़ती घनघोर घटा के समान युद्ध का संकट छाया हुआ है। यह घटा विश्वव्यापी रुप में न बरसे, यह मानव-जाति का सौभाग्य है किन्तु यह आवश्यक नहीं कि इस घटा को कोई तेज हवा का झोंका विश्व के नभोमण्डल से तिरोहित करने की गारण्टी ले सकता है। अमानुषिक, शक्तिशाली, स्वाधीन विज्ञान ने स्वार्थी मानव के हाथ में अनेक अस्त्र, अनेक शस्त्र थमा दिए हैं, जिनसे मानवता को खतरा बना हुआ है। एटम की समस्या का संकेत व्यास के शब्दों में -

''ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्रम्हास्त्र का।
यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ ओ नरपशु!
तो आगे आने वाली सदियों तक
पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी
शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुण्ठाग्रस्त
सारी मनुष्य जाति बौनी हो जायेगी
जो कुछ भी ज्ञान संचित किया है मनुष्य ने
सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में
सदा सदा के लिए होगा विलीन वह।
गेहूं की बालों में सर्प फुफकारेंगे
नदियों में बह कर आयेगी पिघली आग।''

एटम छोड़ने वाले नर-पशु को व्यास के शब्दों में मानो लेखक ही चेतावनी दे रहा है -

''नराधम
ये दोनों ब्रम्हास्त्र सभी नभ में टकरायेंगे
सूरज बुझ जाएगा
धरा बंजर हो जायेगी
... ...
अश्वत्थामा! अपनी कायरता से तू
मत ध्वस्त कर मनुजता को।''

युद्ध का कुपरिणाम संहार ही संहार है जो मानवता के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। युद्ध अपना प्रलयंकार तांडव करने के अनन्तर जो कुछ प्रसाद देता है वह है- चीखती-कराहती मानवता, अपार अर्थ-हानी, विधवाओं के आँसू, रोते-बिलखतें बाफ, घायलों की कतार, पुत्रशोकाकुल पत्थर बनी माताएँ और ऐसा ही अमंगलकारी और कुछ। जो लोग सजधजकर युग में अपना शौर्य प्रदर्शन करने के लिए जाते हैं, लौटकर वे अपाहिजों की पंक्ति का परिवहन ही करते है -

''दुपहर होते होते हिल उठा नगर
खण्डित रथ टूटे छकड़ों पर लद कर
थे लौट रहे ब्राम्हण, स्त्रियां, चिकित्सक
विधवाएँ, बौने, बुढ़े, घायल जर्जर
जो सेना रंग बिरंगी ध्वजा उड़ाते रौंदते हुए धरती को गगन कंपाते
थी गई युद्ध को अठारह दिन पहले
उसका यह रुप हो गया आते-आते।''

शासक स्वार्थान्ध होकर लोगों को युद्ध की दावाग्नि में झोंक देता है। फिर यदि वह .....हुए लोगों की, कराहते हुए व्यक्तियों को सांत्वना भी दे तो किस काम की? यह युद्ध की विभीषिका शासक की सबसे बड़ी पराजय है। धृतराष्ट्र के शब्दों में -

''गूँगों के सिवा आज
और कौन बोलेगा मेरी जय?''

आज के युद्धों का एक बीभत्स पहलू यह है युद्धविराम होने के अनन्तर भी बम बरसाए जाते हैं; सन्धि और समझौते हो जाने पर भी एक दूसरे के प्रति विष-संचार किया जाता है। न जाने कितने अधर्म वारों से विजय प्राप्त की जाती है किन्तु अधर्म वारों से क्रिसमस की छुट्टी के दिन में तथाकथित युद्ध-विराम होता है और रात में घोर नृशंसता का परिचय देते हुए सोती जनता पर बम-वर्षा की जाती है; दिन में सीजफायर डिक्लेयर कर दी जाती है और रात को अस्पतालों पर बम गिरकर तड़पते हुए रोगियों को और भी रौरव कष्टों का अनुभव कराया जाता है। खेद है कि कोई भी पक्ष इस अविवेक को त्यागता नहीं। जय होती है अन्धेपन की; अर्द्ध सत्य की; बर्बरता की और पाशविकता की और पराजय होती है विवेक की, सत्य की और शान्तिपरता की। इस विडम्बनामूलक समस्या का भी संकेत अन्धा युग में किया गया है।

''यह रक्तपात अब कब समाप्त होना है
क्या अजय युद्ध है नहीं किसी की भी जय
दोनों ही पक्षों को खोना ही खोना है
अन्धों से शोभित था युग का सिंहासन
दोनों ही पक्षों में विवेक ही द्वारा
दोनों ही पक्षों में जीता अन्धापन
... ...
तुमको मारा धृष्टद्युम्न ने अधर्म से
भीम ने दुर्योधन को मारा अधर्म से।''

आज विश्व के कोने-कोने से सत्ता के प्रति विद्रोह के समाचार मिलते रहते हैं। कभी छात्रों का आन्दोलन, कभी मजदूरों का-जनता कहीं सुखी नहीं है। पूँजीवादी देशों में यदि शोषण है तो साम्यवादी देशों में विचार-स्वातंत्र्य का अपहरण। पिछले शासन को ही जनता अच्छा मानती है। नये को रोती है। जनता जैसी पहले थी वैसी ही अब है। उसकी स्थिति में सुधार नहीं हुए। भले ही शासन के रंगमंच पर कितने ही नट अपनी कलाबाजी दिखा गये हों। प्रहरियों के माध्यम से इस समस्या पर धार्मिक विचार हुआ है -

''हम जैसे पहले थे वैसे ही अब भी हैं
शासक बदले
स्थितियाँ बिल्कुल वैसी हैं
इससे तो पहले कहीं शासक अच्छे थे
अन्धे थे ....
लेकिन वे शासन तो करते थे
ये तो सन्त ज्ञानी हैं
शासन करेंगे क्या
जानते नहीं है ये प्रकृति प्रजाओं की
ज्ञान और मर्यादा उनका क्या करें हम
उनको क्या पीसेंगे?
या उनको खाएँगे?
या उनको ओढ़ेंगे?
या उन्हें बिछाएँगे?
हमको तो अन्न मिले
निश्चित आदेश मिले
एक सुदृढ़ नायक मिले
अन्धे आदेश मिले
नाम उन्हें चाहे हम युद्ध दें या शान्ति दें
जानते नहीं है ये प्रकृति प्रजाओं की।''

शासक की दशा भीं पुष्ट नहीं है। उसकी यातना की अभिव्यंजना युधिष्ठिर के इस कथन में हुई है -

''ऐसे भयानक महायुद्ध को अर्द्धसत्य रक्तपात हिंसा से जीत कर
अपने को बिलकुल हारा हुआ अनुभव करना
यह भी यातना ही है
जिनके लिए युद्ध किया है
उनको यह पाना कि वे सब कुटुम्बी अज्ञानी हैं,
जड़ हैं दुर्विनीत हैं, या जर्जर हैं
सिंहासन प्राप्त हुआ है जो
यह माना कि उसके पीछे अन्धेपन की
अटल परम्परा है; ''

वास्तव में शासन की परम्परा ही अन्धी है। आँखें खुली रखकर शायद शासन हो ही नहीं सकता। प्रजा जो कष्ट भोगती ही है, किंतु शासक वर्ग भी उन कष्टों से मुक्त नहीं है।
भाई-भतीजावाद भी आज की एक खतरनाक समस्या है, जिसका संकेत धृतराष्ट्र के इस कथन से मिलता है -

''पर वह संसार
स्वत: मेरे अन्धेपन से उपजां था
मैंने अपने वैयक्तिक समवेदन से जो जाना था
केवल उतना ही था मेरे लिए वस्तु जगत
... ...
मेरा स्नेह, मेरी घृणा, मेरी नीति, मेरा धर्म
बिल्कुल मेरा ही वैयक्तिक था
उसमें नैतिकता का कोई बाह्य मापदण्ड था ही नहीं
कौरव जो मेरी माँसलता से उपजे थे
वे ही थे अन्तिम सत्य
मेरी ममता की वहाँ नीति थी
मर्यादा थी।''

आज तटस्थ व्यक्ति पूर्ण तटस्थ नहीं रह पाता। या तो तटस्थ को लोग शत्रु समझ लेते है अथवा कायर। तटस्थ व्यक्ति को अन्तत: एक न एक तरफ झुकना अवश्य पड़ता है।
''शत्रु है अगर वह तटस्थ है।''
तटस्थ व्यक्ति दोनों पक्षों में किसी पर भी दबाव नहीं डाल सकता। उसका व्यक्तित्व नपुंसक व्यक्तित्व है, जैसा कि संजय के शब्दों से प्रतीत होता है -

''मैं दो पहियों के बीच लगा हुआ
एक छोटा निरर्थक शोभा चक्र हूँ
जो बड़े पहियों के साथ घूमता है
पर रथ को आगे नहीं बढ़ाता
और न धरती ही छू पाता है?
और जिसके जीवन का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है
कि वह धुरी से उतर भी नहीं सकता।''

आज के युग में आयुधों की होड़ भी एक समस्या है। बढ़ते हुए अस्त्र और शस्त्र किसी की रक्षा करें या न करें किन्तु हत्या अवश्य कर देंगे! शत्रु की, और यदि शत्रु न हुए, तो स्वयं अपनी ही। इस भयंकर समस्या का संकेत भी प्रहरियों के वार्तालाप से किया गया है -

''युद्ध हो या शान्ति हो
रक्त पात होता है
अस्त्र रहेंगे तो
उपयोग में आएँगे ही
अब तक वे अस्त्र
दूसरों के लिए उठते थे
अब वे अपने ही काम आएँगे
यह जो हमारे अस्त्र अब तक निरर्थक थे
कम से कम उनका
आज कुछ तो उपयोग हुआ।''

समापन -

इस प्रकार आज के युग की प्रमुख समस्याओं का संकेत देते हुए लेखक हमें यह सन्देश देता है कि हम उनका समाधान ढूँढे और उनके कुप्रभाव से बचें। उन पर विजय प्राप्त करें और मानव-मूल्य की प्रतिष्ठा के द्वारा संसार में कल्याण की सृष्टि करें। महाभारत कलि युग का प्रतीकरुप है। आज के दौर में भूमंडीलकरण के नाम पर हम नजदीक आते जा रहे हैं, लेकिन मन विचारों रिश्तों से उतने ही दूर जा रहे हैं। अणुऊर्जा वैज्ञानिक शक्तियाँ हमारे जीवक का आनंद छिन रही है। अंधा युग गीतिनाटक में चित्रित हर घटना आज के दौर में घटित होती नजर आ रही है।

संदर्भ सूची -

1. धर्मवीर भारती- अंधा युग ।